डॉ. बिभा कुमारी

हिंदी विभाग

विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय, राजनगर

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

पाठ्य – सामग्री – हिंदी प्रतिष्ठा, तृतीय वर्ष, पत्र -अष्टम

रीति – सिद्धांत : परिचय

सामान्यतः रीति शब्द प्रणाली, शैली अथवा पद्धति के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। काव्यशास्त्र की दृष्टि से प्रणाली भाषा की एक कलात्मक पद्धति है जिसे रीति की संज्ञा दी गई। भारतीय साहित्यशास्त्र में 'रीति' के लिए प्रवृति, मार्ग, संघटना, वृत्ति आदि शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। भारतीय काव्यशास्त्रकारों में आचार्य वामन ने 'रीति' तत्व की गुणात्मक विशेषताओं का आख्यान करते हुए उसे एक सम्प्रदाय का रूप दिया है। उन्होंने रीति को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। 'काव्यालंकारसूत्रवृति' नामक ग्रंथ में उन्होंने रीति की सांगोपांग विवेचना की है।

गत्यर्थक 'रीड़' धातु में 'क्तिन' प्रत्यय के योग से 'रीति' शब्द की निष्पत्ति मानी गई है। रीति का अर्थ मार्ग, पंथ, पद्धति, प्रणाली आदि है। 'रीति' शब्द का काव्यशास्त्रीय अर्थ है – काव्याभिव्यक्ति या काव्य – संरचना के लिए कवि द्वारा स्वीकृत विशिष्ट पद – रचना या विशेष भाषिक मार्ग। आठवीं शताब्दी के प्रख्यात आचार्य वामन 'रीति' शब्द के सर्वप्रथम प्रयोक्ता एवं रीति सिद्धांत के प्रतिष्ठाता माने जाते हैं। वामन से पूर्व रीति – सिद्धांत का बीज आचार्य भरत के प्रवृत्ति तत्व के रूप में तथा आचार्य भामह एवं दण्डी के मार्ग विषयक अवयव के रूप में उपलब्ध होता है। दंडी ने गुणों की संहति के रूप में जिस तत्व को 'मार्ग' कहा, वामन ने उसे 'रीति' नाम से पुकारा। वामन के उपरांत आचार्य उद्भट ने अनुप्रास अलंकार के विवेचन में वर्णों की मैत्री पर विचार करते हुए 'वृत्ति' नामक एक नवीन तत्व की कल्पना की जो एक प्रकार से रीति का ही नामांतरण था। आचार्य रुद्रट ने भी रस के औचित्य की दृष्टि से रीति का विवेचन किया। नवीं सदी के ध्वनि – सिद्धांत के संस्थापक आचार्य आनंदवर्धन ने 'रीति' का विवेचन 'संघटना' के रूप में किया।

ध्वनिकार आचार्य आनंदवर्धन के उपरांत राजशेखर ने 'रीति' के साथ 'वृति' एवं 'प्रवृति' का भी उल्लेख किया। कुंतक ने रीति के स्थान पर 'मार्ग' शब्द का प्रयोग किया तथा कवि – स्वभाव के आधार पर उसका विभाजन किया। आचार्य मम्मट ने भी अनुप्रास अलंकार के अंतर्गत 'वृत्ति' के रूप में 'रीति' का निरूपण किया। रस – सम्प्रदाय के आचार्य विश्वनाथ ने भी 'रीति' नामकरण को स्वीकार कर 'रस' तत्व की दृष्टि से उसके वैशिष्ट्य का प्रतिपादन किया।

'रीति' शब्द के संक्षिप्त इतिवृत्त से यह पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाता है कि इसके प्रयोग के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है।

रीति तत्व की प्राचीनता का संकेत भरत के 'प्रवृत्ति' शब्द के रूप में उपलब्ध होता है। गुणों के विषय में संस्कृत – काव्यशास्त्र में दो प्रकार की मान्यताएँ उपलब्ध होती हैं। एक में गुणों को काव्य के शरीर रूप शब्दार्थ पर आश्रित मानकर उनकी संख्या दस से लेकर चौबीस तक मानी गई है और दूसरी में गुणों को काव्य के अंगीतत्व रस का धर्म बताकर उनकी संख्या तीन तक सीमित कर दी गई है। प्रथम प्रकार की अवधारणा रखनेवालों में आचार्य वामन प्रमुख हैं।

आचार्य वामन ने अपने 'काव्यालंकार सूत्रवृति' में कहा है –

'काव्यशोभाया: कर्तारो धर्मा गुणा:'

अर्थात काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्व गुण हैं। वामन के अनुसार शब्द और अर्थ का जो धर्म काव्य में शोभा उत्पन्न करता है, वह गुण कहलाता है। गुण के बिना काव्य में सौन्दर्य उत्पन्न नहीं हो सकता है। अतः गुण काव्य का नित्य एवं अपरिहार्य धर्म है इसके साथ ही विशिष्ट पद – रचना को रीति कहा है –

"विशिष्ट पदरचना रीति:"

गुण वामन की रीत्यात्मक पद – रचना के वैशिष्ट्य का निमित्त कारण है। वह काव्य के सहज सौन्दर्य का साधन भी है। वामन के अनुसार अलंकार काव्य – सौन्दर्य का उत्पादक तत्व नहीं है अपितु गुण जनित सौन्दर्य का अतिशायक तत्व है –

"तदतिशयहेतवस्त्वलंकारः"

भारतीय काव्यशास्त्र में मुख्य रूप से तीन रीतियों को मान्यता प्राप्त हुई है – प्रादेशिक, विषयानुकूल तथा कविस्वभाव प्रेरित।